JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बुन्देली साहित्य में बसन्त

नाम– श्रीमती संध्या चौरसिया (शोधार्थी)
पता– वार्ड क्र. 06 चौरसिया मुहाल लवकुशनगर जिला– छतरपुर (म0प्र0)
वि.वि.– महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड वि.वि. छतरपुर
निर्देशक का नाम– डॉ0 पुष्पा दुबे (हिन्दी विभाग अध्यक्ष)

आदिकाल में मानव प्राकृति वातावरण में ही रहा हैं। नदी, वृक्ष, बादल आदि उसके जीवन के अंग थे। वह इन्ही से बातें करता था। विज्ञान ने सिद्ध कर दिया की प्रकृति के अवयवों में भी प्राण हैं, यहीं कारण हैं कि आज भी प्रकृति के अंग समाज में पूज्य हैं। लोक पर्वों में वृक्षों की पूजा की जाती हैं। यही पूज्य भाव के कारण वृक्ष सुरक्षित भी हैं। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा इत्यादि नदियाँ पूज्य हैं। जीवन में जल प्राण के पर्याय ही है। लोक साहित्य में प्रकृति वर्णन लिखा जाना इस तथ्य का द्योतक है कि आरम्भ काल में प्रकृति को पवित्र रखना मानव अपना नैतिक दायित्व समझता हैं। बुन्देली लोक साहित्य में प्रकृति चित्रण का बाहुल्य इसलिए भी है कि ग्राम में किसान प्रातः काल से अपने खेतों की ओर प्रस्थान कर देता हैं। और दिन भर वह प्रकृति के रम्य वातावरण में रहता हैं। जहां नगरों में प्राकृतिक वातावरण को आमोद–प्रमोद, आवास की दृष्टि से भीड़ में बदल दिया जाता हैं। वहीं ग्राम में भूमि का अभाव न होने व भौतिक सुख–सुविधा की चाह न करते हुए प्रकृति का संरक्षण और संवर्द्धन किया जाता हैं। सन् 1531 में बुन्देला राजा रूद्र प्रताप ने ओरछा की नींव रखी थीं। तब लगभग 11 जनपदों का भू–भाग बुन्देलखण्ड कहलाया और इस क्षेत्र में बोली जाने वाली विभाषा बुन्देली कहलायी । बुन्देली काव्य की विशेषता यह है कि इसमें छंद काव्य शास्त्र के नियमों का अंक्षरशः पालन नही किया जाता हैं किन्तु लोक काव्य की लय लोक छंदों में निबद्ध होती हैं। अतः काव्य में मात्राओं के न्यूनाधिक का आभास कवि को हो जाता है। प्रकृति के अवयवों के कुछ नाम बुन्देली में पृथक होते हैं। बसन्त के आगमन पर प्रकृति की छटा दर्शनीय होती हैं कामदेव का एक नाम 'पंचवाण' भी हैं। विशेष रूप से आम्रमञ्जरी की भीनी सुगंध रसकों को उनमाद से भर देती है। कांथा निवासी गुणाकार त्रिपाठी लिखते हैं–

फुलें है रसाल, नव पल्लव विसाल, वन।
जूहीं औं पलास मल्ली आदि बहु कौं गनैं।।
कूजत विहंग पिक कोकिलादि एक संग।
गुंजत मलिंद वन बीथिकान में घनैं।।
बहत समीर मन्द सीतल सुरभि, धीर।
रहत न जोग जुत मुनि गन के मनैं।।
ए रे ब्रजरंग, ऐसे समै देहु संग।।
नतु दहत अनंग मिसु गोपिकान के तनै। 1

आम के विशाल पत्ते, जुही और प्लास आदि के पुष्प अगणित संख्या में हैं। कोयल और मोर एक स्वर में कूक रहें हैं, गलियों में भौंरों की पक्तियाँ गुंजार कर रही हैं। शीतल, मंद, सुगंध युक्त हवा बहने से मुनिजनों का धैर्य छूट रहा हैं। उनका योग के लिए मन सहमत नही हो पा रहा हैं। गोपिकाएं कृष्ण से साथ देने की अपेक्षा कर रही हैं। अन्यथा उनके शरीर काम की अग्नि में जल जायगें। लोक कवि अपने दृष्टि से प्रकृति को देखकर वर्णन करते हैं। कुछ कल्पना और कुछ अनुभूति के आलम्बन से किया गया बसन्त ऋतु का चित्रण मन–भावन होता हैं किन्तु आम और आम्रमञ्जरी का उल्लेख, बसन्त वर्णन में अवश्य ही होता हैं। बसन्त पञ्चमी को कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म दिन और सरस्वती जी का जन्मदिन भी मनाया जाता है किन्तु विचित्र बात यह है कि उस दिन पञ्चमी नही होती हैं, किन्तु कोयल पञ्चम स्वर में कूकती हैं। मध्यप्रदेश में जनपद टीकमगढ़ के अन्तर्गत ग्राम करौंला के निवासी कवि गंभीर सिंह लिखतें हैं–

बसन्त की अवाई अब बागन विच छाई उर,
फूली फुलवाई चहूँ ओर से सुहाई हैं।
आंगन नवीन झौंर झौंरन में भयों मोर,
मौंरन पैं भौंर आम गुंजत सुखदाई हैं।।
भाषत गंभीर सिंह बोलत हैं मधुर कीर,
पंछिन की जुरी भीर भारी अधिकाई हैं।

फूलन के आभूषण अंग पहरे बहुरंग,
रंग बागन में विचरत श्री राधिका कन्हाई हैं।। 2

कवि ने मानवीकरण को इंग्गित करते हुए उल्लेख किया हैं कि बसंत का आमगन बगीचों के हृदय को स्पर्श कर गया हैं। बुन्देली में री का स्थान ई भी ले लेता है। फुलवारी शब्द का अपभ्रशं फुलवाई हो गया। चारों ओर से देखने पर भी फुलवारी सु–शोभित हो रही हैं। मोर के साथ–साथ भौरें भी गुंजार कर रहें हैं। तोता मधुर वाणी बोल रहा हैं, अधिक संख्या में पंछी एकत्र हो गए हैं। श्री राधिका कन्हाई पुष्पों के विविध आभूषण धारण करके उद्यानों में विचरण कर रहे हैं। तुलसीदास जी ने भी वनवास के समय सीता को राम द्वारा पुष्प के आभूषण बनाकर पहनाने का उल्लेख किया हैं –

एक बार चुनि कुसुम सुहाए। निज कर भूषन राम बनाए ।।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर । बैठे फटिक सिला पर सुंदर।।

जनपद झांसी के अन्तर्गत मऊरानीपुर से 8 किलों मीटर दूरी पर मेड़की नामक ग्राम में जन्मे लोक कवि ईसुरी बन्सत ऋतु का क्षेत्र विस्तृत बताते हुए विरह वेदना को रेखांकित करते हैं। बसन्त ऋतु में प्रकृति के अवयव कामोद्दीपन का कार्य करते है। और यह उद्दीपन कंदराओं में तपस्या रत वैंरागियों को भी प्रभावित करते हैं। बुन्देली में ऋतु शब्द का अपभ्रंश रित या रितु शब्द प्रयोग किया गया हैं। लोक कवि ईसुरी लिखते हैं –

अब रित आई बसन्त बहारन, पान फूल फल डारन।
कपट कुटिल कंदरन छाई, गई वैराग बिगारन।।
द्वारन हद पहारन पारन, धाम धवल जल धारन।
'ईसुर' मोर झोर के ऊपर, लगैं भौंर गुंजारन।। 4

कवि कोयल को बुद्धिजीवी का प्रतीक मानता हैं। बुद्धि जीवी उचित अवसर पर उचित ढंग से उचित बात कहता हैं। अज्ञानी लोग स्वताः प्रलाप करते रहते हैं। विडम्बना यह हैं, कि वे अपने प्रलाप को उचित समझते हैं। बुद्धिजीवी की बात सभी समझ जाए, यह आवश्यक नही हैं। अतः प्रायः बुद्धिजीवी मौन रहता हैं क्योंकि उसके बोलने पर ही अज्ञानी उसकी प्रतिभा को पहचान जाते हैं। और बुद्धिजीव को अपमानित करते हैं अतः कोयल वर्षा ऋतु में मौन रहती हैं क्योकि वर्षा ऋतु में मेढ़क बोलते हैं। जनपद झांसी के अन्तर्गत मऊरानी पुर से 12 किलोमीटर दूरी पर सप्तवारा ग्राम में जन्मे श्री वृदांवन लाल वर्मा इसी तथ्य को रेखांकित करते हैं –

मौन रहत हैं कोकिला, ऋतु बरसा के आन।
मेढ़क बोलत पोखरा, कौन सुने पिकवान।।
कौन सुने पिकवान, बनी कोयल मौन संत।
बोलो हैं खामोश, जौ लौ नइ आव बसन्त।।
कह शिक्षक कविराय, सतजन को पूछत कौन।
तकत समय की बाट, तासो ही कोकिल मौन।। 5

बसन्त में कोयल बोलती हैं, कवि ने संत के लक्षण में मौन को रूपायित किया हैं। संत जन समय की प्रतिक्षा करते हैं। और उचित समय पर सत्पात्रों के समक्ष ही बोलते हैं अन्यथा संत का महत्व नही समझा जाता हैं। स्मरणीय है कि निर्दयी कौऐ मौन कोयल को अपनी जाति का ही समझते हुए नही मारते हैं। ऐसी स्थिति में कोयल नही बोलती हैं, दुष्टों को उपदेश देना, स्वंय की हानि ही कराना हैं। अतः कोयल बसन्त ऋतु की प्रतिक्षा करती हैं। जब उसका उचित मूल्यांकन होता हैं।

जो भी हमें दिखाई दे रहा हैं, वह नश्वर हैं। व्यक्ति अपनी पूरी अवस्था कर लेने पर भंगुरता स्वाभाविक हैं। चार आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास होते हैं। व्यक्ति आश्रमानुसार नियमों, कर्त्तव्यों का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करता हैं इसीप्रकार शरीर की भी चार अवस्थाए बाल्य, युवा, प्रौण और वृद्धावस्था होती हैं। ऋतुयें हमें यहीं सन्देश देती हैं कि सदैव समान अवस्था नही रहती हैं। हर ऋतु में वातावरण परिवर्तित हो जाता हैं। ग्रीष्म में गर्मी तो शीत में ठंडक होती हैं। बसन्त ऋतु में पुराने पत्ते गिर जाते हैं। और नवीन पत्ते शाखा पर निकल आते हैं। मानव की वृद्धावस्था आने पर केश गिर जाते है। लोक कवि इन्ही स्थितियों के संकेत से जन–समान्य को यथार्थ का बोध कराता हैं, सदैव युवा नही रहा जा सकता हैं। अतः निराश होने की आवश्यकता नही हैं। बल्कि जिस प्रकार पुराने पत्ते गिर कर नवीन पत्तों को स्थान देते हैं, उसी प्रकार व्यक्ति को भी परवर्ती व्यक्ति के लिए स्थान छोड़ना चाहिए।

ग्राम कुड़ीला जनपद टीकमगढ़ के निवासी दीनदयाल तिवारी 'बेताल' लिखते हैं –

आ गय ऋतुअन के जे राजा, मौसम के महाराजा।
बाग–बगीचा उपवन फूलें, भौंरे बजायॅ बाजा।।
पीरे पात गिरत पेड़न से, कौंपल आ रइ ताजा।
मउआ टपक रए मोती से, मौर गये रस राजा।। 6

मउआ तब गिरता हैं जब उसके पत्ते भी गिर जाते हैं, महुआ से मदिरा बनती है जिसका सेवन करने वाला परीवार व स्वंय को भी विनाश के मार्ग पर ले जाता हैं। बसन्त को ऋतुराज कहा गया हैं। इसलिए कवि ने मौसम का महाराजा कहा हैं।

बसन्त में हर व्यक्ति चाहता हैं कि उसका प्रिय उसके समीप रहे किन्तु जीविका कमाने के लिए व्यक्ति को घर छोड़कर जाना होता हैं। और लौटने की बताई गई अवधि पर न लौटने पर नारी व्याकुल हो जाती हैं। कभी ऐसी भी स्थिति आती हैं कि अवकाश न मिलने पर व्यक्ति चाहकर भी घर नही लौंट पाता हैं। पहले संचार के साधन भी नही थें कि कुशलक्षेम का समाचार मिल सके, ऐसी स्थिति में वियोगिनी नारी की व्याकुलता, पीड़ा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता हैं। बसंत में होती व्याकुलता, पिय का विछोह और अन्य नारी का पति से संयोग देखने से नारी का तन–मन कृश हो जाता हैं। इस संबंध में परम्परागत लोक गीत मिलते हैं। एक लोकगीत दृष्टव्य, यह ख्याल विधा में हैं –

छाये बसन्त आये न कंत, दसहूँ दिसंत हैं ढुढवाये।
पुरवइया जोर, हिय में हिलोर, जियरा किसोर हैं तड़पाये।।
नभ छाये घाम, भूले हैं स्याम, तन छाओ काम, मन अकुलाये।
कटती न रैन, पिय बिन न चैन, असुॅवन में नैंन हैं भर आये।। 7

विरह वेदना केवल गोपिकाओं को ही नही हुई थी बल्कि हर वियोगिनी नारी को होती हैं। लोकगीतों में गोपिकाओं के माध्यम से हर वियोगिनी नारी की पीड़ा रेखांकित होती हैं। इस ख्याल विधा के गीत में उल्लेख किया गया हैं कि अब बसन्त आ चुका हैं किन्तु पति नही आए हैं जबकि दसों दिशाओं में पति की खोज की जा चुकी हैं। तीव्र चलती हवा हृदय उद्वेलन उत्पन्न कर रही हैं। हृदय में तड़पन हैं, नभ में तपन हैं, तन में काम सता रहा हैं, मन आकुल हैं, अब रात्रि बिना पति के बिताना कठिन हो रही हैं और दुख की पराकाष्ठा यह है कि नेत्रों से आँसू बहुत अधिक है जिससे आँसू में नेत्र भर गये हैं।

इस प्रकार बुन्देली काव्य में बसन्त की छठा भी दिखाई देती हैं, तो बन्सत में वियोगी प्राणियों का कष्ट भी मन को दुखी करता है। रीतिकालीन कवियों ने विरह की पीड़ा को व्यंजना में व्यक्त किया हैं। नायिका की पत्र लेखन में असमर्थता दृष्टव्य हैं–

कागद पर लिखत न बनत, कहत संन्देश लजात।
कहि हैं सब तेरो हियो, मेरे हिये की बात।। 8

बसन्त ऋतु जहां प्रकृति को शोभायुक्त कर देती हैं। वहीं विकल मन को और विकल कर देती हैं। प्रकृति संयोग में सुख का संचार करती हैं तो संयोग में उद्दीपन करती हैं। प्रकृति मानव– प्रकृति को परिवर्तित करने की क्षमता रखती हैं।

सन्दर्भ सूचीः–

1. **शिव सिंह सरोज – संपादक डॉ. किशोरीलाल गुप्त पृष्ठ 139**
2. **बुन्देली की रचनाकार ग्रंथ – संपादक डॉ. रामनारायण शर्मा पृष्ठ 135**
3. **श्री रामचरितमानस – तुलसीदास अरण्यकांड दोहा क्रमांक 01 के पूर्व**
4. **बुन्देली भाषा का इतिहास – डॉ. रामनारायण शर्मा पृष्ठ 221**
5. **कुण्डलिया कुण्ड – वृदावनलाल वर्मा पृष्ठ 58**
6. **बेताल की चौकडियाँ– दीनदयाल तिवारी 'बेताल' पृष्ठ 41**
7. **बुन्देली लोक संगीत संजीवनी – आर0डी0 चौरसिया पृष्ठ 650**
8. **बिहारी सतसई– बिहारी दोहा क्रमांक 60**